नीहार

महादेवी वर्मा

साहित्य भवन लिमिटेड
इलाहाबाद

चतुर्थावृत्ति : सन् १९५५ ई०

141613

तीन रुपए

814-H
827

मुद्रक : राम आसरे कक्कड़, हिन्दी साहित्य प्रेस, इलाहाबाद

महादेवी

परिचय

ाद कहते हैं, इस ग्रंथ की अधिकांश कवितायें
ाद किसे कहते हैं? उसे छायावाद कहना
ह वाद ग्रस्त विषय है। स्वयं छायावादी-
निश्चित नहीं कर सके, कि वे अपनी नूतन
ो छायावाद कहें अथवा रहस्यवाद। इस
ंधि इतनी विस्तृत हो गई है कि उन सब का
ा रहस्यवाद में नहीं हो सकता। अतएव
कहने लगे हैं, किन्तु यह संज्ञा अति-व्याप्ति
ज़्म (Mysticism) का यथार्थ-अनुवाद
है, छायावाद शब्द में उसकी छाया दिखलाई
यवाद में अस्पष्टता, अपरिच्छिन्नता और सर्व
झलकती है, वह चमत्कारक होकर अचिन्तनीय
त नहीं पाई जाती। वह स्निग्ध, मनोरम,
तना अचिन्तनीय नहीं, शायद इसीलिये उस
ो स्वीकृति की मुहर लग गई है। छायावाद
और अपने उद्देश की पूर्ति भी कर रहा है।
ा विषय में अधिक इदं कुतः की आवश्यकता
वेषय के लिये जब कोई शब्द रूढ़ि हो जाता
अपेक्षित आवश्यकता के लिये स्वीकृत समझा
: क्या? संसार में अधिकांश नामकरण इसी

आजकल छायावाद की कवितायें इस अधि-
युवक-दल उसकी ओर इतना आकृष्ट है कि
छाया-वाद-युग कह सकते हैं। फिर भी छाया-
ादिम-अवस्था में हैं, उद्गम से बाहर निकलती
के समान उनमें वेग है, प्रवाह है, उल्लास
वाँछित धीरता नहीं, वह स्थान-स्थान पर

तरंगाकुल और आविल भी है। ऐसा होना स्वाभाविक है, काल पाकर उनको समधरातल भी मिलेगा. और उस समय वे मंजु-मंथर-गामिनी और यथेच्छस्वच्छतामयी एवं सरस होंगी। कवि कार्य सुगम नहीं, वह अगम्य है; वह सर्वथा निर्दोष नहीं हो सकता। जब महा-कवियों में भी भ्रम, प्रमाद, और त्रुटियाँ पाई जाती हैं, तो उस पर बात-बात में उँगली उठाना क्या उचित होगा, जिसने अभी कविता क्षेत्र में पदार्पण किया है। प्रेम से दोष प्रक्षालन के लिये किसी को सतर्क करना अवांछनीय नहीं, किन्तु ऐसे अवसरों पर मक्षिका-प्रवृत्ति से काम लेना संगत नहीं। थोड़े समय में भी कतिपय-छायावादी कवियों ने हिन्दी-संसार में कीर्ति अर्जन की है, और उनमें पर्याप्त-भावुकता का विकास देखा गया है। उन्होंने अपने गहन पथ को सरल बनाया है, और कोमल-कान्त-पदावली पर अधिकार करके बड़ी भावमयी कवितायें की हैं। उन्हीं में से एक श्रीमती महादेवी वर्मा कवयित्री भी हैं।

यह ग्रन्थ उनका आदिम ग्रन्थ है फिर भी इसमें उनकी प्रतिभा का विलक्षण विकास देखा जाता है। ग्रन्थ सर्वथा निर्दोष नहीं, किन्तु इसमें अनेक इतनी सजीव और सुन्दर पंक्तियाँ हैं, कि उनके मधुर प्रवाह में उधर दृष्टि जाती ही नहीं। प्रफुल्ल-पाटल प्रसून में काँटे होते हैं, हाँ, किन्तु उसकी प्रफुल्लता और मनोरंजकता ही मुग्धकारिता की सम्पत्ति है। ऐसा कहकर मैं नियमन की अवहेलना नहीं करता हूँ—सहृदयता का नेत्रोन्मीलन कर रहा हूँ। कहा जा सकता है, एक स्त्री का उत्साह वर्द्धन करने के लिए बातें कही गई। मैं कहूँगा यह विचार समीचीन नहीं; ऐसा करना स्त्री जाति की सर्वतोमुखी प्रतिभा को लांछित करना है। वास्तव में बात यह है कि ग्रन्थ की भावुकता और मार्मिकता उल्लेखनीय है; उसका कोमल शब्द-विन्यास भी कम आकर्षक नहीं।

मैं श्रीमती महादेवी वर्मा का हिन्दी-साहित्य क्षेत्र में सादर अभिनन्दन करता हूँ, और उनसे यह विनय भी, कि उनकी हृत्तंत्री के अपूर्व झङ्कार में भारतमाता के कण्ठ की वर्त्तमान ध्वनि भी श्रुति होनी चाहिये, इससे उनकी कीर्ति उज्ज्वल से उज्ज्वलतर होगी। माता की व्यथाओं के अनुभव करने की मार्मिकता मातृत्व पद की अधिकारिणी को ही यथातथ्य हो सकती है।

काशीधाम
२८-४-३०

हरिऔध

सूची

		पृष्ठ
विसर्जन—	...	१
मिलन	...	३
अतिथि से	...	५
मिटने का खेल	...	६
संसार	...	७
अधिकार	...	९
कौन ?	...	१०
मेरा राज्य	...	११
चाह	...	१४
सूनापन	...	१५
सन्देह	...	१७
निर्वाण	...	१८
समाधि के दीप से—	...	१९
अभिमान	...	२०
उस पार	...	२२
मेरी साध—	...	२४
स्वप्न	...	२६
आना—	...	२८
निश्चय—	...	२९
अनुरोध—	...	३१
तब—	...	३२
मुर्झाया फूल	...	३४
कहाँ ?	...	३७
उत्तर	...	३८
फिर एक बार	...	३९
उनका प्यार—	...	४१
आँसू	...	४३

		पृष्ठ
मेरा एकान्त	...	४४
उनमें	...	४६
मेरा जीवन	...	४७
सूना संदेश	...	५०
प्रतीक्षा	...	५१
विस्मृति	...	५४
अनन्त की ओर	...	५६
स्मारक	...	५७
मोल	...	५९
वीर	...	६०
वरदान	...	६२
स्मृति	...	६३
याद	...	६५
नीरव भाषण	...	६६
अनोखी भूल	...	६९
आँसू की माला	...	७१
फूल	...	७४
खोज	...	७६
जो तुम आ जाते एक बार	...	७८
परिचय	...	७९

नीहार

नीहार

विसर्जन—

निशा की, धो देता राकेश
चाँदनी में जब अलकें खोल,
कली से कहता था मधुमास
'बता दो मधुमदिरा का मोल';

'झटक जाता था पागल वात
धूल में तुहिनकणों के हार;'
सिखाने जीवन का सङ्गीत
तभी तुम आये थे इस पार।

बिछाती थीं सपनों के जाल
तुम्हारी वह करुणा की कोर,
'गई वह अधरों की मुस्कान
मुझे मधुमय पीड़ा में बोर;

भूलती थी मैं सीखे राग
बिछलते थे कर बारम्बार,
'तुम्हें तब आता था करुणेश!
उन्हीं मेरी भूलों पर प्यार!'

गए तब से कितने युग बीत
हुए कितने दीपक निर्वाण!
नहीं पर मैंने पाया सीख
तुम्हारा सा मनमोहन गान।

× × ×

'नहीं अब गाया जाता देव!
थकी अँगुली, हैं ढीले तार
विश्ववीणा में अपनी आज
मिला लो यह अस्फुट झङ्कार!'

१६२८ मई

नीहार

मिलन

रजतकरों की मृदुल तूलिका-
से ले तुहिनबिन्दु सुकुमार,
कलियों पर जब आँक रहा था
करुण कथा अपनी संसार;

तरल हृदय की उच्छ्वासें जब
भोले मेघ लुटा जाते,
अन्धकार दिन की चोटों पर
अञ्जन बरसाने आते।

मधु की बूँदों में छलके जब
तारक लोकों के शुचि फूल,
विधुर हृदय की मृदु कम्पन सा
सिहर उठा वह नीरव कूल;

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से,
स्वप्नलोक के से आह्वान,
वे आये चुपचाप सुनाने
तब मधुमय मुरली की तान।

चल चितवन के दूत सुना
उनके, पल में रहस्य की बात,
मेरे निर्निमेष पलकों में
मचा गए क्या क्या उत्पात !

जीवन है उन्माद तभी से
निधियां प्राणों के छाले,
मांग रहा है विपुल वेदना-
के मन प्याले पर प्याले !

पीड़ा का साम्राज्य बस गया
उस दिन दूर क्षितिज के पार,
मिटना था निर्वाण जहां
नीरव रोदन था पहरेदार ।

× × ×

कैसे कहती हो सपना है
अलि ! उस मूक मिलन की बात ?
भरे हुए अबतक फूलों में
मेरे आँसू उनके हास !

१९२१ अप्रैल

अतिथि से

बनबाला के गीतों सा
निर्जन में बिखरा है मधुमास,
इन कुञ्जों में खोज रहा है
सूना कोना मन्द बतास।

नीरव नभ के नयनों पर
हिलती हैं रजनी की अलकें,
जाने किसका पंथ देखतीं
बिछकर फूलों की पलकें!

मधुर चाँदनी धो जाती है
खाली कलियों के प्याले,
बिखरे से हैं तार आज
मेरी वीणा के मतवाले:

पहली सी झङ्कार नहीं है
और नहीं वह मादक राग,
अतिथि! किन्तु सुनते जाओ
टूटे तारों का करुण विहाग!

१९२९ मई

मिटने का खेल

मैं अनन्त पथ में लिखती जो
सस्मित सपनों की बातें,
उनको कभी न धो पायेंगी
अपने आँसू से रातें !

उड़ उड़ कर जो धूल करेगी
मेघों का नभ में अभिषेक,
अमिट रहेगी उसके अञ्चल—
में मेरी पीड़ा की रेख।

तारों में प्रतिबिम्बित हो
मुस्कायेंगी अनन्त आँखें,
होकर सीमाहीन, शून्य में
मंडरायेंगी अभिलाषें।

वीणा होगी मूक बजाने—
वाला होगा अन्तर्धान,
विस्मृति के चरणों पर आकर
लौटेंगे सौ सौ निर्वाण !

जब असीम से हो जायेगा
मेरी लघु सीमा का मेल,
देखोगे तुम देव ! अमरता
खेलेगी मिटने का खेल !

१६२६ मई

संसार

निश्वासों का नीड़, निशा का
बन जाता जब शयनागार,
लुट जाते अभिराम छिन्न
मुक्तावलियों के बन्दनवार,

तब बुझते तारों के नीरव नयनों का यह हाहाकार,
आँसू से लिख लिख जाता है 'कितना अस्थिर है संसार' !

हँस देता जब प्रात, सुनहरे
अञ्चल में बिखरा रोली,
लहरों की बिछलन पर जब
मचली पड़तीं किरणें भोली,

तब कलियां चुपचाप उठाकर पल्लव के घूँघट सुकुमार,
छलकी पलकों से कहती हैं 'कितना मादक है संसार !'

देकर सौरभ दान पवन से
कहते जब मुरझाये फूल,
'जिसके पथ में बिछे वही
क्यों भरता इन आँखों में धूल?

'अब इनमें क्या सार' मधुर जब गाती भौंरों की गुञ्जार,
मर्मर का रोदन कहता है 'कितना निष्ठुर है संसार!'

स्वर्ण वर्ण से दिन लिख जाता
जब अपने जीवन की हार,
गोधूली, नभ के आँगन में
देती अगणित दीपक बार,

हँसकर तब उस पार तिमिर का कहता बढ़ बढ़ पारावार,
'बीते युग, पर बना हुआ है अब तक मतवाला संसार!'

स्वप्नलोक के फूलों से कर
अपने जीवन का निर्माण,
'अमर हमारा राज्य' सोचते
हैं जब मेरे पागल प्राण,

आकर तब अज्ञात देश से जाने किसकी मृदु झङ्कार,
गा जाती है करुण स्वरों में 'कितना पागल है संसार!'

१९२९ मई

अधिकार

वे मुस्काते फूल, नहीं—
जिनको आता है मुरझाना,
वे तारों के दीप, नहीं—
जिनको भाता है बुझ जाना ;

वे नीलम के मेघ, नहीं—
जिनको है घुल जाने की चाह,
वह अनन्त ऋतुराज, नहीं—
जिसने देखी जाने की राह ।

वे सूने से नयन, नहीं—
जिनमें बनते आँसू-मोती,
वह प्राणों की सेज, नहीं
जिसमें बेसुध पीड़ा सोती ;

ऐसा तेरा लोक, वेदना
नहीं, नहीं जिसमें अवसाद,
जलना जाना नहीं, नहीं—
जिसने जाना मिटने का स्वाद !

× × ×

'क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार ?
रहने दो हे देव ! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार !'

१६२६ मई

कौन ?

ढुलकते आँसू सा सुकुमार
बिखरते सपनों सा अज्ञात,
चुरा कर ऊषा का सिन्दूर
मुस्काया जब मेरा प्रात,

छिपा कर लाली में चुपचाप
सुनहला प्याला लाया कौन ?

× × ×

हँस उठे छूकर टूटे तार
प्राण में मँडराया उन्माद,
व्यथा मीठी ले प्यारी प्यास
सो गया बेसुध अन्तर्नाद,

घूँट में थी साक़ी की साध
सुना फिर फिर जाता है कौन ?

१९२९ जुलाई

मेरा राज्य

रजनी ओढ़े जाती थी
झिलमिल तारों की जाली,
उसके बिखरे वैभव पर
जब रोती थी उजियाली;

शशि को छूने मचली सी
लहरों का कर कर चुम्बन,
बेसुध तम की छाया का
तटनी करती आलिङ्गन।

अपनी जब करुण कहानी
कह जाता है मलयानिल,
आँसू से भर जाता जब—
सूखा अवनी का अञ्चल;

पल्लव के डाल हिंडोले
सौरभ सोता कलियों में,
छिप छिप किरणें आती जब
मधु से सींची गलियों में।

आँखों में रात बिता जब
विधु ने पीला मुख फेरा,
आया फिर चित्र बनाने
प्राची में प्रात चितेरा;

कन कन में जब छाई थी
वह नवयौवन की लाली,
मैं निर्धन तब आई ले,
सपनों से भर कर डाली।

जिन चरणों की नखआभा—
ने हीरकजाल लजाये,
उन पर मैंने धुँधले से
आँसू दो चार चढ़ाये!

इन ललचाई पलकों पर
पहरा जब था व्रीड़ा का,
साम्राज्य मुझे दे डाला
उस चितवन ने पीड़ा का!!

नीहार

उस सोने के सपने को
देखे कितने युग बीते !
आँखों के कोष हुए हैं
मोती बरसा कर रीते ;

अपने इस सूनेपन की
मैं हूँ रानी मतवाली,
प्राणों का दीप जला कर
करती रहती दीवाली ।

मेरी आहें सोती हैं
इन ओठों की ओटों में,
मेरा सर्वस्व छिपा है
इन दीवानी चोटों में !!

चिन्ता क्या है, हे निर्मम !
बुझ जाये दीपक मेरा ;
हो जायेगा तेरा ही
पीड़ा का राज्य अँधेरा !

१९२८ जुलाई

चाह

चाहता है यह पागल प्यार;
अनोखा एक नया संसार !

कलियों के उच्छ्वास शून्य में तानें एक वितान,
तुहिनकणों पर मृदु कम्पन से सेज बिछादें गान;

जहाँ सपने हों पहरेदार,
अनोखा एक नया संसार !

करते हों आलोक जहाँ बुझ बुझ कर कोमल प्राण,
जलने में विश्राम जहां मिटने में हों निर्वाण ;

वेदना मधुमदिरा की धार,
अनोखा एक नया संसार !

मिल जाव उस पार क्षितिज के सीमा सीमाहीन,
गर्वीले नक्षत्र धरा पर लोटें होकर दीन !

उदधि हो नभ का शयनागार,
अनोखा एक नया संसार !

जीवन की अनुभूति तुला पर अरमानों से तोल,
यह अबोध मन मूक व्यथा से ले पागलपन मोल !

करें दृग आँसू का व्यापार,
अनोखा एक नया संसार !

१९२९ जुलाई